Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
January to March 2025 E-Journal, Volume I, Issue XLIX, ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

बाह्य देशों से प्राचीन एवं आरंभिक मध्यकालीन भारत का व्यापारिक सम्बन्ध

डॉ. सीमा गौतम*

* सह आचार्य (इतिहास) साहू राम स्वरूप महिला महाविद्यालय, बरेली (उ.प्र.) भारत

शोध सारांश – किसी भी राष्ट्र के विकास में व्यापार वाणिज्य की महत्वपूर्ण भूमिका रहती है। भारत को उत्तर में हिमालय और दक्षिण में समुद्र की सीमा होने का सौभाग्य प्राप्त है।समुद्र की उपस्थिति ने महाद्वीपों में व्यापार के प्रसार में बहुत सहायता की है। प्राचीन काल में भारत कपास, रेशम, चीनी, बहुत से कीमती पत्थरों एवं मसाले का प्रमुख निर्यातक था। यह सभी वस्तुएं अन्य देशों से सोने और चांदी के बदले में निर्यात की जाती थी। कई राजवंशों के सम्राटों ने व्यापार वाणिज्य को प्रोत्साहन देते हुए विभिन्न प्रकार के सिक्कों का प्रचलन प्रारंभ किया। मुस्लिम सत्ता स्थापित हो जाने के बाद मुसलमान व्यापारियों तथा सौदागरों की गतिविधियां तेज हो गई जिसके परिणाम स्वरुप उत्तारी भारत में व्यापार वाणिज्य की प्रगति हुई। 11 वीं शती तक आते-आते भारत और पश्चिमी देशों के बीच व्यापार पुन: तेज हो गया जिससे देश आर्थिक दृष्टि से समृद्ध हुआ।

प्रस्तावना – विदेशों में भारत का विस्तार एवं प्रसार केवल सांस्कृतिक रूप में ही नहीं हुआ अपितु राजनीतिक और आर्थिक दृष्टि से भी भारत बहुत दूर तक फैला हुआ था। अत्यंत प्राचीन काल से ही भारत और पश्चिमी देशों का व्यापारिक संबंध था।[1]चोल, पाण्डय और केरल राज्यों के व्यापारी ग्रीस रोम और चीन के बाजारों से व्यापार किया करते थे।व्यापार के कारण इन प्रदेशों के परस्पर घनिष्ठ संबंध स्थापित हो गए थे।[2] पश्चिमी देशों के साथ भारत के व्यापारिक संबंधों की प्राचीनता प्रागैतिहासिक युग तक जाती है। अत्यंत प्राचीन काल से ही यहां के निवासियों ने व्यापार वाणिज्य के क्षेत्र में गहरी दिलचस्पी दिखाई। राज्य की ओर से भी व्यापारियों को पर्याप्त प्रोत्साहन एवं संरक्षण प्रदान किया गया। परिणाम स्वरुप यहां का आंतरिक एवं बाह्य दोनों ही व्यापार विकसित हुआ।[3] ज्ञात होता है कि सिंधु सभ्यता के निवासियों का मेसोपोटामिया की सुमेरियन सभ्यता के निवासियों के साथ घनिष्ठ व्यापारिक संबंध था। गावरा, हमा, असमर, उर, किश, लगश आदि मेसोपोटामिया के नगरों से लगभग एक दर्जन सिंधु सभ्यता की मुहरें प्राप्त होती हैं।[4] मुहरों के अतिरिक्त सोने-चांदी तथा तांबें के विभिन्न प्रकार के आभूषण हाथी दांत के कंघें, मनके, मिट्टी के विभिन्न प्रकार के बर्तन, लकड़ी का सामान आदि भी मेसोपोटामिया के नगरों से प्राप्त होता है।[5] बहरीन दीप की खुदाई के दौरान कुछ ऐसे अवशेष प्राप्त हुए जिनके आधार पर यह कहा जा सकता है कि यहां के व्यापारी सिंधु और मेसोपोटामिया के व्यापारियों के मध्य बिचौलिया के रूप में कार्य किया करते थे। दूसरी ओर सुमेरियन उत्पत्ति की अनेक वस्तुएं जैसे मिट्टी की मुहरें हथौड़ा, रेखित, कालेर्नियन मनका, भेड़ का खिलौना, सफेद संगमरमर की मुहर आदि सिंधु घाटी सभ्यता के विभिन्न स्थलों से भी प्राप्त होती हैं।

सुमेरियन शासक सारगोन (2371.2316 ईसा पू:) के समय कुछ लेखों से यह जानकारी प्राप्त होती है कि उर तथा अन्य नगरों के व्यापारियों का मेलूहा (जिसका समीकरण सिंध प्रदेश अथवा इस में स्थित मोहनजोदड़ो से किया जाता है) के व्यापारियों के साथ संबंध था। अत: यह स्पष्ट हो जाता है कि सिंधु घाटी सभ्यता के समय से ही भारत का पाश्चात्य जगत के साथ व्यापारिक संबंध न केवल स्थापित हो चुका था अपितु यह अत्यंत विकसित भी था। यह व्यापार मुख्यत: जलमार्ग के माध्यम से ही होता था उस समय का प्रसिद्ध समुद्री बंदरगाह लोथल था।

पाश्चात्य जगत के साथ भारत का संबंध वैदिक युग में भी चलता रहा। भारत के व्यापारी फारस की खाड़ी तक जाते थे तथा वहां वस्तुओं का क्रय-विक्रय किया करते थे।[6] ऋग्वेद से यह पता चलता है कि सिंधु प्रदेश के पानीदार घोड़े, ऊनीवस्त्र, शक्तिशाली रथ पूरे विश्व में प्रसिद्ध थे। इसी प्रकार गांधार क्षेत्र चिकनी तथा सुंदर ऊन के लिए प्रसिद्ध था। भारत तथा पश्चिमी देशों के बीच घनिष्ठ व्यापारिक संबंधों की पुष्टि बौद्ध साहित्य से भी होती है। भारत में इस समय भृगुकच्छ तथा सोपारा प्रसिद्ध बंदरगाह थे, जहां पर कई देशों के व्यापारी अपने जहाजों में वस्तुएं भरकर लाते तथा ले जाते थे। बाबेरू जातक से ज्ञात होता है कि भारतीय व्यापारी बेबीलोन से मोर तथा कौवे को खरीदा करते थे। व्यापारियों द्वारा समुद्री यात्रा करने तथा कभी-कभी जहाजों के दुर्घटनाग्रस्त होने का उल्लेख जातक ग्रंथों में कई स्थानों पर प्राप्त होता है।

ईसा पूर्व छठी शताब्दी के मध्य साइरस महान के नेतृत्व में ईरान में हखामनी साम्राज्य की स्थापना हुई। उसके उत्तराधिकारी दारा प्रथम (522-486 ई.पू.) ने सिंधु तथा पंजाब को जीत कर भारत को अपने साम्राज्य का अंग बना लिया जिससे भारत का पश्चिमी देशों के साथ व्यापारिक संबंध बढ़ा। दारा के नौ सेनाअध्यक्ष स्काईलैक्स ने दोनों देशों के बीच एक नए समुद्री मार्ग का पता लगाया। इससे होकर भारतीय व्यापारी पश्चिमी देशों में व्यापार करने गए तथा वहां से उन्होंने काफी धन कमाया। कुछ ईरानी सिक्के पश्चिमोत्तर सीमा से प्राप्त होते हैं जिनसे ईरान के साथ भारतीय व्यापार की पुष्टि हो जाती है।[7]

मौर्य युग में अनेक विदेशी राज्यों के साथ भारत का व्यापारिक संबंध विद्यमान था। इस बात की कतिपय सूचनाएं कौटिल्य रचित ग्रंथ अर्थशास्त्र से प्राप्त होती हैं।[8] इस समय भारत का व्यापार सीरिया, मिस्र तथा अन्य पाश्चात्य देशों के साथ स्थापित हुआ। यूनानी रोमन लेखक भारत के समुद्री व्यापार का वर्णन करते हैं।[9] समुद्री यात्रियों को पोत विज्ञान की शिक्षा दी जाती थी जिसका नाम था नियामकसिप। उन्हें विविध व्यापारिक मार्गों, हवा की दिशाएं और दिशकों का प्रयोग की जानकारी कराई जाती थी।[10] एरियन लिखता है कि भारतीय व्यापारी मुक्ता बेचने के लिए यूनान के बाजारों में जाते थे। कौटिल्य के अर्थशास्त्र से भी ज्ञात होता है कि इस समय व्यापारी विदेश जाते थे तथा पण्याध्यक्ष और नवाध्यक्ष नामक अधिकारी विदेश जाने वाले व्यापारियों की देखरेख किया करते थे। विदेशी सार्थवाहों का भी उल्लेख मिलता है। जो उत्तरी पश्चिमी भारत के स्थल मार्गों से व्यापार के लिए आते थे।[11] मौर्य काल में सड़कों में साइन बोर्ड लगे हुए थे जिसमें मोड़ और बीच-बीच में दूरियां बताई रहती थी।[12]

मौर्य साम्राज्य के पतन के बाद दक्कन में सातवाहनों तथा उत्तर पश्चिम में कुषाणों ने शक्तिशाली साम्राज्य की स्थापना की। इस काल में भारत का मध्य एशिया तथा पश्चिमी देशों विशेषकर रोम के साथ व्यापारिक संबंध काफी बढ़ गया था।[13] रोम के शासक भारत के व्यापार को बहुत अधिक महत्व देते थे। उनकी नीति थी कि पूर्वी देशों का यह व्यापार समुद्र के मार्ग से हो और ईरान से होकर आने वाला स्थल मार्ग अधिक प्रयोग में ना आये। इसी कारण 25 ईसा पूर्व में सम्राट आगस्टस ने एक मंडल इस प्रयोजन से नियुक्त किया था कि वह समुद्र के मार्ग को विकसित व उन्नत करने का प्रयत्न करें। इस मंडल के प्रयास से शीघ्र ही अदन और इजिप्ट पर ग्रीस के व्यापारियों ने कब्जा कर लिया और वहां अपनी बस्तियां बसा ली। सामुद्रिक वायु का भली-भांति ज्ञान हो जाने के कारण इस समय के जहाज 3 माह से भी कम समय में भारत से अलेक्जेंड्रिया जोकि इजिप्ट का एक बंदरगाह था, तक आने-जाने लग गए थे। इस समय अलेक्जेंड्रिया से भारत की ओर जाने वाले जहाजों की संख्या प्रतिदिन 1 की औसत से थी। इस प्रकार यह अनुमान सहज ही लगाया जा सकता है कि भारत का इन पाश्चात्य देशों के साथ व्यापार संबंध कितना अधिक था।[14]

भारत से जो भी सामान पाश्चात्य देशों में बिकने के लिए जाता था वहां उसकी मांग बहुत अधिक थी। हाथी दांत का सामान, मसाले, मोती, सुगंधियां और सूती वस्त्र आदि सामान भारत से बहुत बड़ी मात्रा में रोम व साम्राज्य के अन्य नगरों में बिकने के लिए जाता था और उसके बदले बहुत सा सोना भारत को प्राप्त होता था। यही कारण है जो रोम की बहुत सी स्वर्ण मुद्राएं आज भी भारत के कई स्थानों से प्राप्त होती हैं।[15] दक्षिण भारत के कोयंबटूर तथा मदुरा जिलों से रोम के इतनी बड़ी संख्या में सिक्के प्राप्त हुए हैं, जिन्हें 5 कुली भी उठाने में असमर्थ होंगे। पंजाब के हजारा जिले से भी रोम के बहुत से सिक्के मिले हैं जिनके कारण भारत और रोमन साम्राज्य के पारस्परिक व्यापार के संबंध में कोई भी संदेह नहीं रह जाता। भारत से रोम जाने वाले सामान में सबसे महत्वपूर्ण स्थान सूती वस्त्रों का था। एक रोमन लेखक ने शिकायत की थी कि रोम की स्त्रियां भारत से आने वाले बुनी हुई 'हवा के जाले' मलमल को पहनकर अपने सौंदर्य को प्रदर्शित करती हैं। इसमें संदेह नहीं कि प्राचीन समय में भी भारत अपने महीन वस्त्रों के लिए प्रसिद्ध था।[16]

मौर्योत्तर काल में भी भारत विश्व के कई देशों से स्थल और जल मार्ग द्वारा जुड़ा हुआ था। असुरक्षा और मार्ग की अन्य कठिनाइयों के कारण स्थल मार्गों की अपेक्षा जल मार्गों का उपयोग अधिक किया जाता था। आगे चलकर गुप्त सम्राटों के समय में विदेशी व्यापार का और भी विस्तार हुआ। यह व्यापार पूर्व की तरह से पूर्वी एवं पश्चिमी देशों से स्थल तथा जल दोनों प्रकार के मार्गों द्वारा होते थे।[17]

सातवीं शताब्दी में हर्ष काल को विद्वानों ने आर्थिक दृष्टि से पतन का काल बताया है। हवेनसांग के विवरण के अनुसार इस समय तक कई नगर तथा शहर वीरान हो चुके थे।[18]मुद्राओं और मुहरों का भी अभाव हो गया था। इससे यह प्रतीत होता है कि यह व्यापार वाणिज्य के पतन का काल था तथा समाज उत्तरोत्तर कृषि मूलक होता जा रहा था।कृषि हर्ष के शासन काल की आर्थिक रीढ थी।[19]

पूर्व मध्यकाल में भी भारतीय मालवाहक जहाज अरब, फारस, मिस्र आदि देशों को जाया करते थे। हेमचंद्र के अनुसार भारत में अरब से घोड़े मंगाए जाते थे।पर्शिया से रंग भारत को आता था। इब्नखुर्ददवा के विवरण से ज्ञात होता है कि कपूर, चंदन जायफल, लॉग, चीनी, नारियल, मखमली कपड़े, हाथी दांत, मोती, काली मिर्ची, बांस आदि भारत से इराक तथा अरब के देशों में निर्यात किया जाता था। किंतु ऐसा प्रतीत होता है कि इस युग में अतिरिक्त उत्पादन के अभाव ने दूरवर्ती देशों के साथ व्यापार को प्रभावित तथा सीमित किया। राजपूत काल में सामंतों द्वारा छोटे-छोटे राज्यों को स्थापित किया गया जो अपनी शक्ति और प्रभाव बढ़ाने के लिए परस्पर संघर्ष में उलझ गए। सामंतों ने व्यापार वाणिज्य को हतोत्साहित किया तथा आत्मनिर्भर ग्रामीण अर्थव्यवस्था को प्रोत्साहन दिया।[20]

विद्वानों ने आर्थिक विकास की दृष्टि से पूर्व मध्यकाल को दो भागों में बांटा हैं। प्रथम भाग जो कि 650 से 1000 ई. तक है, में व्यापार वाणिज्य का ह्रास हुआ। रोम साम्राज्य का इस समय तक पतन हो चुका था इसके परिणाम स्वरूप भारत का पश्चिमी देशों के साथ व्यापार बंद हो गया। इस्लाम के उदय के कारण भी भारत के स्थल मार्ग से होने वाला व्यापार प्रभावित हुआ। इसी कारण इस काल में हमें स्वर्ण मुद्राओं तथा मुहरों का अभाव देखने को मिलता है। स्वर्ण मुद्राओं का प्रचलन काफी हद तक बंद हो चुका था तथा चांदी एवं तांबे की मुद्राएं भी बहुत कम ढलवाई गयी। नगरीय पतन के कारण व्यापारी वर्ग गांव की ओर उन्मुख हुआ। किंतु इस काल का अगर दूसरे भाग 1000 से 1200 ईसवी पर दृष्टिपात किया जाए तो व्यापार वाणिज्य की स्थिति में सुधार मिलता है। इस समय कुछ बड़े राज्यों- चौहान, परमार, चंदेल आदि की स्थापना हुई तथा विकेंद्रीकरण की प्रवृत्तियों पर अंकुश लगा। इन राजवंशों के सम्राटों ने व्यापार वाणिज्य को प्रोत्साहन देते हुए सिक्कों का प्रचलन पुन: प्रारंभ किया। मुस्लिम सत्ता स्थापित हो जाने के बाद से मुसलमान व्यापारियों तथा सौदागरों की गतिविधियां तेज हो गयी जिसके परिणाम स्वरूप उत्तरी भारत में व्यापार वाणिज्य की प्रगति हुई। 11वीं शती तक आते-आते भारत और पश्चिमी देशों के बीच व्यापार पुन: तेज हो गया। जिससे देश आर्थिक दृष्टि से समृद्ध हुआ। इस समय के सिक्के तथा मुहरें बड़ी संख्या में प्राप्त होती हैं।

उत्तर भारत के समान दक्षिण भारत के चालुक्य, पल्लव, पाण्डय तथा चोल राजाओं के काल में भी भारत का पश्चिमी देशों के साथ व्यापारिक संबंध अत्यंत विकसित रहा।[21] आबू जैद के अनुसार भारत के व्यापारी सिरफ जो कि फारस की खाड़ी के पूर्वी तट पर स्थित एक व्यापारिक केंद्र था, बड़ी संख्या में वहां जाते थे[22] तथा मुस्लिम व्यापारियों के साथ संपर्क स्थापित

करते थे।आबू जैद ने आगे लिखा है कि सिरफ से व्यापारी जहाज लाल सागर से होकर चीन नहीं जाया करते थे बल्कि जैद्दा से होकर भारत चले जाते थे।इसका कारण था कि भारत के समुद्र में मोती तथा अंबर बड़ी संख्या में पाये जाते थे तथा यहां के पहाड़ों में रत्नों और सोने की खाने थीं। दक्कन के राष्ट्रकूट राजाओं ने भी अरब के व्यापारियों के साथ मधुर संबंध बनाए रखें उनसे सामान खरीदने में उन को लाभ होता था। इस समय दक्षिण में कई प्रसिद्ध बंदरगाह थे जिससे होकर पश्चिमी देशों को जाया जाता था। इसमें भडौच, सोमनाथ, खंभात,कोलम आदि के नाम उल्लेखनीय हैं। कोलम सुदूर दक्षिण तथा समुद्र पार के पश्चिमी देशों के बीच व्यापारिक गतिविधियों का प्रमुख केंद्र था। पश्चिमी देशों से आने वाले जहाज यहां रुका करते थे और इस देश को जाने वाले चीनी जहाजों का भी यह विश्राम स्थल हुआ करता था।

भारत में पश्चिमी देशों को जाने के लिए तीन प्रमुख व्यापारिक मार्ग थे पहला मार्ग सिंधु नदी के मुहाने से समुद्र तट होता हुआ फारस की खाड़ी में स्थित दजला फरात तक जाता था। दूसरा व्यापारिक थल मार्ग था जो कि हिंदूकुश दर्रो से होकर बल्ख और इरान होते हुए अंतियोक तक जाता था तथा तीसरा मार्ग जो कि जलमार्ग हुआ करता था वह फारस तथा अरब के तटवर्ती क्षेत्रों से होता हुआ लाल सागर को पार कर यूनान तथा मिस्र की ओर जाता था। भारत के व्यापारियों ने अधिकांशत: जल मार्गों का ही उपयोग किया। इस प्रकार कहा जा सकता है कि भारत का पाश्चात्य देशों के साथ व्यापारिक संबंध प्रागैतिहासिक युग से प्रारंभ होकर 12 वीं सदी तक निर्बाध रूप से चलता रहा जो कि भारत के लिए लाभकारी सिद्ध हुआ तथा उसकी समृद्धि का एक महत्वपूर्ण साधन बना।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. वेदालंकार, चंद्रगुप्त: वृहत्तर भारत, प्रकाशक मुख्याधिष्ठाता गुरुकुल कांगड़ी-1939 पृष्ठ 275(उत्थानिका)
2. मुखर्जी, राधा कुमुद: हिस्ट्री ऑफ इंडियन शिपिंग एंड मैरिटाइम एक्टिवली फ्रॉम द अर्लीएस्ट टाइम, पृष्ठ 116
3. श्रीवास्तव, के सी: प्राचीन भारत का इतिहास तथा संस्कृति, यूनाइटेड बुक डिपो, इलाहाबाद, पृष्ठ 930
4. वही पृष्ठ सं 931
5. वही पृष्ठ सं 931
6. वही पृष्ठ सं 931
7. श्रीवास्तव, के सी: प्राचीन भारत का इतिहास तथा संस्कृति, यूनाइटेड बुक डिपो, इलाहाबाद, पृष्ठ 932
8. विद्यालंकार, सत्यकेतु: प्राचीन भारत का धार्मिक, सामाजिक, आर्थिक जीवन- श्री सरस्वती सदन(मसूरी) सफदर जंग, नई दिल्ली,पृष्ठ 363
9. श्रीवास्तव, के सी: प्राचीन भारत का इतिहास तथा संस्कृति यूनाइटेड बुक डिपो, इलाहाबाद, पृष्ठ 932
10. चौधरी, राधा कृष्ण:, प्राचीन भारत का आर्थिक इतिहास, जानकी प्रकाशन पटना, पृष्ठ 160
11. श्रीवास्तव, के सी: प्राचीन भारत का इतिहास तथा संस्कृति, यूनाइटेड बुक डिपो, इलाहाबाद, पृष्ठ 933
12. चौधरी, राधा कृष्ण: प्राचीन भारत का आर्थिक इतिहास, जानकी प्रकाशन, पटना, पृष्ठ 158
13. श्रीवास्तव, के सी: प्राचीन भारत का इतिहास तथा संस्कृति, यूनाइटेड बुक डिपो, इलाहाबाद, पृष्ठ 934
14. विद्यालंकार, सत्यकेतु: प्राचीन भारत का धार्मिक, सामाजिक, आर्थिक जीवन, श्री सरस्वती सदन(मसूरी) सफदरजंग, नई दिल्ली, पृष्ठ 385
15. वही पृष्ठ-385
16. वहीं पृष्ठ 385-386
17. पाण्डेय, संजय कुमार: प्राचीन भारत में व्यापारिक मार्ग, कला एवं शोध संस्थान, वाराणसी, पृष्ठ 130
18. श्रीवास्तव, केसी: प्राचीन भारत का इतिहास तथा संस्कृति, यूनाइटेड बुक डिपो, इलाहाबाद, पृष्ठ 934
19. ई पत्रिका इंडिया नेट जोन: हर्ष युग के दौरान सामाजिक आर्थिक जीवन
20. श्रीवास्तव, के सी: प्राचीन भारत का इतिहास तथा संस्कृति, यूनाइटेड बुक डिपो, इलाहाबाद, पृष्ठ 934
21. वही पृष्ठ 935
22. पांडे, संजय कुमार: प्राचीन भारत में व्यापारिक मार्ग, कला एवं शोध संस्थान, वाराणसी, पृष्ठ 131

****